# पाठ्यक्रम - २७

## २७.अ जैन परमाणु विज्ञान - अणु एवं स्कन्ध

पुद्गल जैन दर्शन का विशिष्ट पारिभाषिक शब्द है। अन्य दर्शनों में इसे भूत तथा आधुनिक विज्ञान में इसे मैटर अथवा एनर्जी के नाम से जाना जाता है। यह चेतना शून्य, मूर्त-स्पर्श, रस, गंध वर्ण से युक्त द्रव्य है। जो एक दूसरे के साथ मिलकर बिछुड़ता रहे, ऐसे पूरण गलन स्वभावी मूर्तिक जड़ पदार्थ पुद्गल कहलाता है।

पुद्गल के दो भेद हैं - 1. अणु और 2. स्कन्ध। अणु को परमाणु भी कहते हैं।

**परमाणु**

1. जो अत्यन्त तीक्ष्ण शस्त्र से भी छेदा या भेदा नहीं जा सकता तथा जल और अग्नि के द्वारा नाश को प्राप्त नहीं होता ऐसे पुद्गल द्रव्य के अन्तिम छोटे से छोटे भाग को परमाणु कहते हैं।

2. एक परमाणु में स्पर्श गुण की दो (स्निग्ध - रूक्ष में से एक तथा शीत-उष्ण में से एक), रस गुण की एक, गंध गुण की एक तथा वर्णगुण की एक इस प्रकार चार गुणों की पाँच पर्याय होती हैं।

3. स्वयं ही जिसका आदि है, स्वयं ही जिसका अन्त है। इन्द्रिय से ग्राह्य नहीं है, ऐसे अविभागी द्रव्य को परमाणु जानना चाहिए। इसका आकार गोल होता है।

**स्कन्ध**

१. जिनमें स्थूल रूप से पकड़ना, रखना आदि व्यापार होता है अर्थात् जिन परमाणुओं ने परस्पर बन्ध कर लिया है वे स्कन्ध कहलाते हैं। स्कन्ध के छह भेद कहे गए हैं जिनमें:-

१. बादर-बादर स्कन्ध २. बादर स्कन्ध ३. बादर-सूक्ष्म स्कन्ध
४. सूक्ष्म-बादर स्कन्ध ५. सूक्ष्म स्कन्ध ६. सूक्ष्म-सूक्ष्म स्कन्ध।

० काष्ठ, पाषाण आदि जो कि छेदन करने पर स्वयं आपस में न जुड़ सके तथा जिन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान तक आसानी से ले जाया जा सके, उन्हें ''बादर-बादर'' अथवा स्थूल-स्थूल स्कन्ध कहते हैं।

० जिन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाया जा सकता है किन्तु छिन्न-भिन्न करने पर जो स्वयं जुड़ जाते हैं ऐसे दूध, पानी तेल आदि तरल पदार्थ स्थूल अथवा बादर स्कन्ध कहे जाते हैं।

० जिसे नेत्र इन्द्रिय के द्वारा देखा जा सके किन्तु पकड़ में न आ सके, ऐसे छाया, प्रकाश आदि ''बादर-सूक्ष्म स्कन्ध'' है। चूंकि ये दिखते हैं इसलिए स्थूल हैं तथा पकड़ में न आने के कारण सूक्ष्म कहे जाते हैं।

० जो आँखों से तो नहीं दिखते हों किन्तु शेष इन्द्रियों के द्वारा अनुभव किए जाते हैं ऐसे हवा, गंध, रस आदि ''सूक्ष्म-बादर स्कन्ध'' कहे जाते हैं। शब्द, रस, गन्ध, स्पर्श सूक्ष्म-बादर कहलाते हैं क्योंकि यद्यपि इनका चक्षु इन्द्रिय के द्वारा ज्ञान नहीं होता इसलिए ये सूक्ष्म हैं परन्तु अपनी-अपनी कर्ण आदि इन्द्रियों के द्वारा इनका ग्रहण हो जाता है इसलिए स्थूल भी कहलाते हैं।

० जो किसी भी इन्द्रिय का विषय न बने ऐसे कार्मण स्कन्ध की ''सूक्ष्म स्कन्ध'' संज्ञा है।

० अत्यन्त सूक्ष्म द्वयणुक स्कन्ध को सूक्ष्म - सूक्ष्म स्कन्ध कहते हैं। यह स्कन्धों की अन्तिम इकाई है।

० अनन्त परमाणुओं का स्कन्ध भी लोक के एक प्रदेश में रह सकता है इसका कारण यह है कि पुद्गल परमाणु भी अवगाहन स्वभाव वाला है और उसका सूक्ष्म रूप से परिणमन हो जाता है, जिस प्रकार एक कमरे में अनेक दीपकों का प्रकाश (मूर्तिक) रह जाता है उसी प्रकार मूर्त पुद्गलों का एक जगह अवगाह होने में कोई विरोध नहीं।

० चाक्षुष और अचाक्षुष के भेद से स्कन्ध दो प्रकार के होते हैं। चाक्षुष का अर्थ चक्षु (नेत्र) इन्द्रिय का विषय तथा अचाक्षुष का

अर्थ नेत्र इन्द्रिय का विषय न होना अर्थात देखने में न आने वाला। अनन्तानन्त परमाणुओं के समुदाय से निष्पन्न होकर भी कोई स्कन्ध चाक्षुष होता है और कोई अचाक्षुष। अचाक्षुष स्कन्ध भी भेद और संघात से चाक्षुष बन जाता है जैसे हथेली में मल दिखता नहीं किन्तु अगुंली को जोर से रगड़ने पर मल दिखने लग जाता है अथवा हाइड्रोजन और आक्सीजन अचाक्षुष है किन्तु आक्सीजन के दो परमाणु टूट कर एक हाइड्रोजन में जुड़ जाते है तो $H_2O$ जल चाक्षुष बन जाता है।

० शब्द, बन्ध, सूक्ष्मत्व, स्थूलत्व, संस्थान, भेद, तम, छाया, आताप और उद्योत ये सभी पुद्गल द्रव्य की पर्याएँ हैं। भाषा वर्गणा रूप जो पुद्गल शब्द रूप परिणमन करते हैं उन्हें ''शब्द'' कहते हैं।

वैस्रसिक अैर प्रायोगिक के भेद से बन्ध दो भेद वाला है। जिसमें पुरुष का प्रयोग अपेक्षित नहीं है वह वैस्रसिक बन्ध है जैसे स्निग्ध-रूक्ष गुण के निमित्त से होने वाला बिजली, उल्का, मेघ आदि के विषयभूत बन्ध। तथा जो बन्ध पुरुष के प्रयोग के निमित्त से होता है वह प्रायोगिक बन्ध है जैसे लाख और लकड़ी आदि का अजीव सम्बन्धी और कर्म-नोकर्म का जीव से साथ जीवाजीव सम्बन्धी प्रायोगिक बन्ध है। सूक्ष्मता दो प्रकार की है - अन्त्य ओर आपेक्षिक। परमाणु में अन्त्य सूक्ष्मत्व है तथा बेल, आँवला और बेर आदि में आपेक्षिक सूक्ष्मत्व है। स्थौल्य भी दो भेद रूप है - अन्त्य और आपेक्षिक। जगव्यापी महास्कन्ध में अन्त्य स्थौल्य है तथा बेर, आँवला और बेल आदि में आपेक्षिक स्थौल्य है।

इत्थं लक्षण और अनित्यं लक्षण के भेद से संस्थान दो भेद वाला है। जिसके विषय में ''यह संस्थान इस प्रकार का है'' यह निर्देश किया जा सके वह इत्थं लक्षण संस्थान है। जैसे - वृत्त, त्रिकोण, चतुष्कोण आदि। जिसके विषय में इस प्रकार का है नहीं कहा जा सकता वह अनित्थं लक्षण वाला संस्थान है - जैसे मेघ आदि का आकार उत्कर, चूर्ण, खण्ड, चूर्णिका, प्रत्तर और अणुचटन के भेद से भेद के छह प्रकार हैं।

जो प्रकाश का विरोधी है तथा जिससे दृष्टि में प्रतिबन्ध होता है वह तम कहलाता है। प्रकाश को रोकने वाले पदार्थों के निमित्त से जो पैदा होती है वह छाया कहलाती है। जो सूर्य के निमित्त से उष्ण प्रकाश होता है उसे आतप कहते हैं। चन्द्रमणि और जुगनू आदि के निमित्त से जो प्रकाश पैदा होता है वह उद्योत है।

० सुख, दुःख, जीवन, मरण, शरीर, वचन, मन, प्राणापान ये सब पुद्गल द्रव्य के जीव पर उपकार हैं।

पाठ्यक्रम पूर्ण होने पर परीक्षा हेतु निम्न तरीके से प्रश्न बनाए जा सकते हैं

| | |
|---|---|
| १. सही विकल्प चुनिए | २. लघु उत्तरीय प्रश्न |
| ३. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न | ४. परीभाषाएँ लिखें |
| ५. सही/गलत का चिह्न लगाएँ | ६. एक शब्द में उत्तर दें |
| ७. अधूरी पंक्ति पूरी करें | ८. खाली स्थान भरें |
| ९. सही जोड़ी बनाएँ | १०. शब्द चुनकर नीचे खाली स्थान भरें |
| ११. कहानी का सार संक्षेप में लिखें | १२. संस्मरण लिखें |
| १३. एक विषय पर व्याख्या लिखें | १४. भेद-प्रभेद लिखें |

**विशेष**

| | |
|---|---|
| १५. शुद्ध लेखन करें (शिक्षक बोले लिखने को कहें) | १६. हिन्दी की गिनतियाँ पूछें-लिखवाएँ |
| १७. भजन की पंक्तियाँ सुनाएँ-लिखें | १८. सामान्य ज्ञान के प्रश्न-उत्तर पूछें |
| १९. कहानी लिखकर लाने को कहें | २०. चित्र बनायें रंग भरवाएँ |
| २१. बुद्धि परीक्षण एवं शारीरिक स्वस्थता हेतु खेल-कूद कराएँ | २२. शुद्ध लेखन हेतु स्लेट-कलम का प्रयोग करवाएँ |
| २३. टी.वी. प्रोजेक्टर के माध्यम से शिक्षाप्रद चलचित्र दिखाएँ | २४. बच्चों को पुरस्कार में स्लेट-कलम दें |

२५. सांस्कृतिक कार्यक्रम हेतु सांस्कृतिक मंडल की संयोजना करें जिसमें चुनिंदा कलाकार हों जिन्हें सालभर प्रशिक्षण दिया जाता हो। शेष बच्चों से सामान्य नृत्य आदि करवाएँ।

# पार्श्वनाथ स्तवन

जल वर्षाते घने बादल काले-काले डोल रहे।
झंझा चलती बिजली तड़की घुमड़-घुमड़ कर बोल रहे॥
पूर्व वैर-वश कमठदेव हो इस विध तुमको कष्ट दिया।
किन्तु ध्यान में अविचल प्रभु हो घाति कर्म को नष्ट किया ॥ 1॥
द्युतिमय बिजलीसम पीला निज फण का मण्डप बना लिया।
नागइन्द्र तव कष्ट मिटाने तुम पर समुचित तना दिया॥
दृश्य मनोहर तब वह ऐसा विस्मयकारी एक बना।
संध्या में पर्वत को ढकता समेत बिजली मेघ घना॥ 2॥
आत्मध्यान-मय कर में खर-तर खड्ग आपने धार लिया।
मोह रूप निज दुर्जय रिपु को पल-भर में बस मार दिया॥
अचिन्त्य-अद्भुत आर्हत पद को फलतः पाया अघहारी।
तीन लोक में पूजनीय जो अतिशयकारी अतिभारी ॥ 3॥
मनमाने कुछ तापस ऐसे तप करते थे वनवासी।
पाप रहित तुम को लख इच्छुक तुम सम बनने अविनाशी॥
हम सबका श्रम विफल रहा यों समझ सभी वे विकल हुए।
शम-यम-दममय सदुपदेश सुन तव चरणन में सफल हुए ॥ 4॥
समीचीन विद्या तप के प्रभु रहे प्रणेता वरदानी।
उग्रवंश मय विशाल नभ के दिव्य सूर्य पूरण-ज्ञानी ॥
कुपथ निराकृत कर भ्रमितों को पथिक सुपथ के बना दिये।
पार्श्वनाथ मम पास वास बस करो देर अब बिना किए ॥5॥
खास दास की आस बस, श्वास-श्वास पर वास।
पार्श्व करो मत दास को, उदासता का दास ॥ 6॥
ना तो सुरसुख चाहता, शिव-सुख की ना चाह।
तव थुति सरवर में सदा, होवे मम अवगाह॥ 7॥

## संस्मरण - अहिंसा के प्रति रुचि

काम हमेशा ऐसा होना चाहिए, जिससे अपना अहिंसा धर्म भी पलता रहे तथा साथ-साथ अपनी जिंदगी की गुजर बसर भी होती रहे। परन्तु अक्सर देखने में आता है कि हम जिंदगी की गुजर बसर के चक्कर में धर्म को प्रायः भूल जाते हैं, जो हमारे लिए अभिशाप सिद्ध होता है। परन्तु यदि धर्म का ध्यान रखकर काम किया जाये तो प्रसिद्धि एवं पूज्यता अवश्य ही प्रदान करता है। बालक विद्याधर जब अपने खेतों में काम करने जाते थे तब तम्बाखू के पेड़ों की जड़ों में लगे कीड़े निकालने के लिए कीड़ों को जमीन से निकालकर ऊपर रखकर उन्हें मिट्टी से ढक देते थे ताकि अहिंसा की रक्षा हो जाए। एक बार एक पड़ोसी खेत वाले ने विद्याधर को ऐसा करते देख लिया तो उसने मल्लप्पाजी से शिकायत कर दी कि विद्याधर कीड़ों को निकालकर मिट्टी से ढक देता है, उन्हें मारता नहीं है। ऐसे में तो कीड़े फसल को खा जायेंगे फिर नुकसान उठाना पड़ेगा। यह जानकारी मिलने पर मल्लप्पाजी ने बालक विद्याधर को खेत पर यह काम करने को भेजना बंद कर दिया।

अहिंसा के प्रति उस समय का यह लगाव आज वट वृक्ष का रूप धारण कर लिया है। दयोदय गायों के प्रति करुणा इसका प्रायोगात्मक उदाहरण है।

## समाधि भावना

इतना तो कर दो स्वामी, जब प्राण तन से निकले।
होवे समाधि पूरी, जब प्राण तन से निकले॥
माता - पितादि जितने, हैं ये कुटुम्ब सारे।
उनसे ममत्व छूटे, जब प्राण तन से निकले॥
इतना तो.....॥
बैरी बहुत से मेरे, होवेंगे इस जगत् में [2]
उनसे क्षमा करा लूँ, जब प्राण तन से निकले॥
इतना तो.....॥
परिग्रह का जाल मुझपर, फैला बहुत है स्वामी[2]
उनसे ममत्व छूटे, जब प्राण तन से निकले॥
इतना तो.....॥
दुष्कर्म दुःख दिखावे या रोग मुझको घेरे[2]
प्रभु का न ध्यान छूटे, जब प्राण तन से निकले॥
इतना तो.....॥
इच्छा क्षुधा-तृषा की, होवे जो उस घड़ी में[2]
उसका भी त्याग कर दूँ, जब प्राण तन से निकले॥
इतना तो.....॥
हे नाथ अर्ज करता, विनती पे ध्यान दीजे[2]
होवे सफल मनोरथ, जब प्राण तन से निकले॥
इतना तो.....॥

● आज की समस्या ही भीड़ का जीवन। समस्या से मुक्त होने का उपाय है अकेलेपन का जीवन। जिसने सदा भीड़ का जीवन जिया है, वह कभी अनुभव की गहराई में जा ही नहीं सकता। अनुभव की गहराई में वही व्यक्ति जा सकता है जिसने अकेलेपन का जीवन जिया है।

# पाठ्यक्रम - २७

## २७.ब जैनत्व की गौरव गाथा - जैन तीर्थक्षेत्र

**तन की गर्मी तो मिटे, मन की भी मिट जाये। तीर्थ जहाँ पर उभय सुख, अमिट अमित मिल जाये।**

जहाँ पर शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार की आकुलताएँ नष्ट हो जाती हैं, जो शाश्वत और अनन्त सुख का साधन है। ऐसे तीर्थंकर एवं केवलियों की निर्वाण भूमि (मोक्ष स्थान) तीर्थक्षेत्र कहलाते हैं। तीर्थंकरों के पञ्चकल्याणकों से पवित्र एवं अतिशय युक्त स्थानों को भी तीर्थ कहते हैं।

अष्टापदजी(कैलास पर्वत), ऊर्जयन्त पर्वत (गिरनारजी), श्री सम्मेदशिखरजी, चम्पापुरजी, पावापुरजी, नैनागिरजी, बावनगजाजी, सिद्धवरकूटजी, मुक्तागिरिजी, सिद्धोदयजी (नेमावर), कुंथलगिरिजी, मथुरा चौरासीजी, तारंगाजी, शत्रुंजयजी, गुणावाजी, कुण्डलपुरजी आदि सिद्धक्षेत्र कहलाते हैं।

अयोध्याजी, श्रावस्तीजी, कौशाम्बीजी, काशीजी, चन्द्रपुरीजी, काकन्दीपुरी, भद्दिलापुरीजी, सिंहपुरीजी, कपिलाजी, रत्नपुरीजी, हस्तिनापुरीजी, मिथिलापुरजी, कुशाग्रपुरजी, शौरीपुरजी, कुण्डलपुरजी आदि।

गोम्मटेश्वरजी, महावीरजी, तिजाराजी, पपौराजी, अहिच्छत्र पार्श्वनाथजी, महुवा पार्श्वनाथजी, रामटेकजी, बहोरीबंदजी, पनागरजी, पिसनहारी की मढ़ियाजी, देवगढ़जी, चाँदखेड़ीजी, सीरोनजी, मूढ़बद्रीजी, बीनाबाराजी, थूवौनजी, अमरकटंकजी, नवागढ़जी, नेमगिरिजी (जिन्तूर), कचनेरजी आदि अतिशयक्षेत्र कहलाते हैं।

१. **तीर्थराज श्री सम्मेदशिखरजी** - तीर्थराज सम्मेदशिखर दिगम्बर जैनों का सबसे बड़ा और सबसे ऊँचा शाश्वत सिद्धक्षेत्र है। ये वर्तमान में झारखण्ड प्रदेश में पारसनाथ स्टेशन से 23 किलोमीटर पर मधुवन में स्थित है। तीर्थराज सम्मेदशिखर की ऊँचाई 4,579 फीट है। इसका क्षेत्रफल 25 वर्गमील में है एवं 27 किलोमीटर की पर्वतीय वन्दना है। सम्पूर्ण भूमण्डल पर इस शाश्वत निर्वाणक्षेत्र से पावन, पवित्र और अलौकिक कोई भी तीर्थक्षेत्र, अतिशयक्षेत्र और सिद्धक्षेत्र नहीं है। इस तीर्थराज के कण-कण में अनन्त विशुद्ध आत्माओं की पवित्रता व्याप्त है। अत: इसका एक-एक कण पूज्यनीय है, वन्दनीय है। कहा भी है- **एक बार वन्दे जो कोई ताको नरक पशुगति नहीं होई।** एक बार जो इस पावन पवित्र सिद्धक्षेत्र की श्रद्धापूर्वक वन्दना करते हैं। उसकी नरक और तिर्यञ्चगति छूट जाती है अर्थात् वो नरकगति में और तिर्यञ्चगति में जन्म नहीं लेता है। इस तीर्थराज सम्मेदशिखर से वर्तमान काल सम्बन्धी चौबीसी के बीस तीर्थङ्करों के साथ-साथ अरबों मुनियों ने मोक्ष प्राप्त किया है। इस तीर्थ की एक बार वन्दना करने से करोड़ों उपवास का फल मिलता है। इस सिद्धक्षेत्र की भूमि के स्पर्श मात्र से संसार ताप नाश हो जाता है। परिणाम निर्मल, ज्ञान उज्ज्वल, बुद्धि स्थिर, मस्तिष्क शांत और मन पवित्र हो जाता है। पूर्वबद्ध पाप तथा अशुभ कर्म नष्ट हो जाते हैं। दु:खी प्राणी को आत्मशांति प्राप्त होती है। ऐसे निर्वाण क्षेत्र की वन्दना करने से उन महापुरुषों के आदर्श से अनुप्रेरित होकर आत्मकल्याण की भावना उत्पन्न होती है।

२. **श्री पावापुरजी ( बिहार )** - यहाँ से अन्तिम तीर्थङ्कर महावीरस्वामी को निर्वाण की प्राप्ति हुई थी। यहाँ तालाब के मध्य में एक विशाल मन्दिर है, जिसे जलमन्दिर कहते हैं। जलमन्दिर में तीर्थङ्कर महावीरस्वामी, गौतम स्वामी एवं सुधर्मास्वामी के चरण स्थापित हैं। कार्तिक कृष्ण अमावस्या को तीर्थङ्कर महावीरस्वामी के निर्वाण दिवस के उपलक्ष्य में यहाँ बहुत बड़ा मेला लगता है।

३. **श्री गिरनारजी ( गुजरात )** - 22 वें तीर्थङ्कर श्री नेमिनाथजी के दीक्षा, केवलज्ञान एवं निर्वाण कल्याणक यहीं से हुए तथा 72 करोड़ 700 मुनि यहाँ से मोक्ष पधारे यहाँ कुल 5 पहाड़ी हैं। प्रथम पहाड़ी पर राजुल की गुफा, दूसरी पहाड़ी पर अनिरुद्धकुमार के चरण चिह्न, तीसरी पहाड़ी पर शम्भुकुमार के चरण चिह्न, चौथी पहाड़ी पर प्रद्युम्नकुमार के चरण चिह्न हैं। पाँचवीं पहाड़ी पर तीर्थङ्कर नेमिनाथ जी के चरण चिह्न हैं। चरणों के पीछे तीर्थङ्कर श्री नेमिनाथजी की भव्य दिगम्बर प्रतिमा है। गुरुवर आचार्य श्री विद्यासागरजी ने इस पहाड़ी पर सन् १९९७ में ५ एलक दीक्षा प्रदान की थीं।

# तत्त्वार्थ सूत्र

अथ नवमोऽध्यायः

आस्त्रव निरोधः, संवरः ॥१॥ स, गुप्ति समिति, धर्मानुप्रेक्षा, परिषहजय, चारित्रैः ॥२॥ तपसा, निर्जरा च ॥३॥ सम्यग्योग निग्रहो, गुप्तिः ॥४॥ ईर्या भाषैषणा-, दाननिक्षेपोत्सर्गाः, समितयः ॥५॥ उत्तमक्षमा, मार्द-वार्जव, शौच सत्य, संयम तपस्त्यागा-, किञ्चन्य ब्रह्मचर्याणि, धर्मः ॥६॥ अनित्या-शरण, संसारै-कत्वा-न्यत्वा-,शुच्यास्त्रव, संवर निर्जरा, लोक बोधिदुर्लभ, धर्मस्वाख्या, तत्त्वानु-चिन्तन-, मनुप्रेक्षाः ॥७॥ मार्गा-च्यवन, निर्जरार्थं, परिषोढव्याः, परीषहाः ॥८॥ क्षुत् पिपासा, शीतोष्ण, दंशमशक, नाग्न्या-रति स्त्री, चर्या निषद्या शय्या-, क्रोश वध याचना-,लाभ रोग, तृणस्पर्श मल, सत्कारपुरस्कार-प्रज्ञा-ज्ञाना-, दर्शनानि ॥९॥ सूक्ष्मसाम्पराय, छद्मस्थ-वीतरागयोश-, चतुर्दशः ॥१०॥ एकादश, जिने ॥११॥ बादरसाम्पराये, सर्वे ॥१२॥ ज्ञानावरणे, प्रज्ञाज्ञाने ॥१३॥ दर्शन-मोहान्तराययो-, रदर्शना-लाभौ ॥१४॥ चारित्रमोहे, नाग्न्या-रति स्त्री, निषद्या-क्रोश याचना, सत्कारपुरस्काराः ॥१५॥ वेदनीये, शेषाः ॥१६॥ एकादयो भाज्या, युगपदे-कस्मिन्-, नैकोन-विंशतेः ॥१७॥ सामायिक-, च्छेदो-पस्थापना, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसाम्पराय, यथाख्यात-मिति चारित्रम् ॥१८॥ अनशनाव-मौदर्य, वृत्तिपरिसंख्यान, रसपरित्याग, विविक्तशय्यासन, कायक्लेशा, बाह्यं तपः ॥१९॥ प्रायश्चित्त विनय, वैयावृत्त्य स्वाध्याय, व्युत्सर्ग ध्यानान्-,युत्तरं ॥२०॥ नव चतु-र्दश, पञ्च द्वि भेदा, यथाक्रमं, प्राग्ध्यानात् ॥२१॥ आलोचना प्रतिक्रमण, तदुभय विवेक, व्युत्सर्ग तपश्छेद, परिहारोप-स्थापनाः ॥२२॥ ज्ञान दर्शन, चारित्रोपचाराः ॥२३॥ आचार्यो-पाध्याय, तपस्वि शैक्ष, ग्लान गण, कुल संघ, साधु मनोज्ञानाम् ॥२४॥ वाचना, पृच्छनानु-प्रेक्षाम्नाय, धर्मोपदेशाः ॥२५॥ बाह्याभ्यन्तरो-पध्योः ॥२६॥ उत्तम संहननस्यैकाग्र-, चिन्ता निरोधो ध्यान-, मान्त-र्मुहूर्तात् ॥२७॥ आर्त्त रौद्र, धर्म्य शुक्लानि ॥२८॥ परे, मोक्षहेतू ॥२९॥ आर्त-, ममनोज्ञस्य, संप्रयोगे, तद्-विप्रयोगाय, स्मृति-समन्वाहारः ॥३०॥ विपरीतं, मनोज्ञस्य ॥३१॥ वेदनायाश्च ॥३२॥ निदानं च ॥३३॥ तदविरत, देशविरत, प्रमत्तसंयतानाम् ॥३४॥ हिंसा-नृत स्तेय, विषयसंरक्षणेभ्यो, रौद्र-मविरत, देशविरतयोः ॥३५॥ आज्ञापाय विपाक, संस्थान विचयाय, धर्म्यम् ॥३६॥ शुक्ले चाद्ये, पूर्वविदः ॥३७॥ परे, केवलिनः ॥३८॥ पृथक्-त्वैकत्व-वितर्क, सूक्ष्मक्रिया-प्रतिपाति- व्युपरतक्रिया-निवर्तीनि ॥३९॥ त्र्येकयोग, काययोगा-,योगानाम् ॥४०॥ एकाश्रये, सवितर्क वीचारे, पूर्वे ॥४१॥ अवीचारं, द्वितीयम् ॥४२॥ वितर्कः, श्रुतम् ॥४३॥ वीचारोऽर्थ, व्यञ्जन योग, संक्रान्तिः ॥४४॥ सम्यग्दृष्टि श्रावक, विरतानन्त- वियोजक, दर्शनमोह, क्षपकोप- शमकोप-, शान्तमोह क्षपक, क्षीणमोह जिनाः, क्रमशोऽसंख्येयगुण, निर्जराः ॥४५॥ पुलाक बकुश कुशील, निर्ग्रन्थ-स्नातका निर्ग्रन्थाः ॥४६॥ संयम श्रुत, प्रतिसेवना, तीर्थ, लिंग, लेश्योप-पाद स्थान, विकल्पतः, साध्याः ॥४७॥ ॥

।। इति तत्त्वार्थ सूत्रे नवमोध्यायः ॥९॥

## अथ दशमोऽध्यायः

मोहक्षयाज्-, ज्ञान दर्शना-, वरणान्तराय, क्षयाच्-च, केवलम् ॥१॥ बन्ध हेत्व-भाव, निर्जराभ्यां, कृत्स्नकर्म, वि-प्र मोक्षो, मोक्षः ॥२॥ औपाशमिकादि,भव्यत्वानां च ॥३॥ अन्यत्र, केवल सम्यक्त्व, ज्ञान दर्शन, सिद्धत्वेभ्यः ॥४॥ तदनन्तर, मूर्ध्वं गच्छत्या, लोकान्तात् ॥५॥ पूर्वप्रयोगा-, दसंगत्वाद्-, बन्धच्छेदात्, तथागति-परिणामाच्-च ॥६॥ आविद्ध-कुलाल-चक्रवद्-, व्यपगत-लेपालांबु-,वदेरण्डबीज-, वदग्नि-शिखावच्-च ॥७॥ धर्मास्तिकाया-, भावात् ॥८॥ क्षेत्र काल गति, लिंग तीर्थ चारित्र, प्रत्येक-बुद्ध- बोधित, ज्ञानावगाह-नान्तर, संख्याल्प, बहुत्वतः, साध्याः ॥९॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे दशमोऽध्यायः ॥१०॥

अक्षर-मात्र पदस्वर-हीनं, व्यञ्जन-संधि-विवर्जितरेफम्। साधुभिरत्र मम क्षमितव्यं, को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे ॥१॥
दशाध्याये परिच्छिन्ने, तत्त्वार्थे पठिते सति। फलं स्या-दुप-वासस्य, भाषितं मुनिपुङ्गवैः ॥२॥
तत्त्वार्थ - सूत्रकर्तारं, - गृद्ध - पिच्छोप-लक्षितम्। वन्दे गणीन्द्र संजात - मुमास्वामि मुनीश्वरम् ॥३॥

अपने उत्तरदायित्व को कभी न भूलें, अपने उत्तरदायित्व का ज्ञान
बहुधा हमारे संकुचित व्यवहारों का सुधारक तथा विश्वासनीय पथ प्रदर्शक होता है।

समझाने में नहीं, है समझे में सार । समझाने वाले कई, पड़े बीच मझधार ।।

# तीन लाख की तीन बातें

किसी नगर में एक जटाधारी संत पधारे। संत को देखकर नगरवासियों ने उनसे अपने घर पर भोजन करने हेतु निवेदन किया। तब संत जी बोले–मैं भोजन तो करूँगा लेकिन एक शर्त है वह यह कि मैं तीन बात आप लोगों को दूँगा जो मेरी बातों को मुझसे लेगा उसी के घर में भोजन करूँगा और मेरी एक बात की कीमत है एक लाख रुपए। नगरवासियों ने जब यह बात सुनी तो सभी ने मना कर दिया और कहा कि इतनी महँगी बात तो हम नहीं ले सकते आप कहीं और प्रस्थान करें।

आखिर तीन दिन व्यतीत हो गये साधु जी को कहीं भोजन नहीं मिला अत: उपवास हो गए। यह बात नगर के राजा के कानों तक पहुँची। राजा बहुत दु:खी हुआ। मेरे नगर में कोई संत आएं और हम उनको भोजन नहीं करा सके। हमारा गृहस्थाश्रम व्यर्थ है। उसने अपने सेवकों को तुरंत आज्ञा दी। उन्हें ससम्मान राजमहल में आमंत्रित किया जावे। राजा के निवेदन पर संत जी महल पहुँचे तो राजा दोनों हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। उसने साधु जी से निवेदन किया कि मेरी भोजनशाला में आप भोजन ग्रहण करें एवं कृतार्थ करें। मुझे आपकी सभी शर्तें मंजूर हैं। अत: आप मुझ पर कृपा करें।

साधु ने राजा के आग्रह पर भोजन स्वीकार कर लिया। भोजन करने के बाद राजा ने नम्रता पूर्वक पुन: निवेदन किया – हे पूज्य श्री! मेरेलिए उपदेश प्रदान करें। तब साधु जी ने उन्हें तीन बातें बताईं, पहली बात – प्रतिदिन सुबह उठकर घूमने जाना, दूसरी बात – शत्रु भी अगर तुम्हारा अतिथि बनकर आए तो उसका सत्कार करना, तीसरी बात – विपरीत परिस्थितियों में भी उतावली नहीं करना। राजा ने कहा – गुरुजी निश्चित मैं आपकी इन बातों को अपने जीवन में उतारकर अपना जीवन सफल बनाऊँगा। तत्पश्चात् जब राजा साधु जी को तीन लाख रुपए देने लगे तो साधु जी मुस्कुराए और बोले – बेटा मुझे धन से क्या प्रयोजन ? धन की चाह होती तो घर क्यों छोड़ता। मुझे तो ये परखना था कि किसके मन में मेरे उपदेश को ग्रहण करने की इच्छा है। किसके लिए धन से ज्यादा उपदेश मूल्यवान है। अत: मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है। तुम निरंतर धर्ममय जीवन बिताते हुए प्रजा का पालन करो। मैं आगे जाता हूँ।

उपदेश को ग्रहण कर राजा प्रतिदिन सुबह–सुबह घूमने के लिए जाने लगा। लगभग एक माह व्यतीत हुआ कि सुबह–सुबह जब वह घूमने जा रहा था कि उसे रास्ते में एक बहुत बड़ी महिला की आकृति दिखाई दी। वो महिला जोर–जोर से रो रही थी। राजा ने पूछा – तुम कौन हो और क्यों रो रही हो ? उसने जवाब दिया – मैं भवितव्यता हूँ अर्थात् भविष्य में होने वाली घटना का प्रतीक। यहाँ का राजा बहुत धर्मात्मा और प्रजा का हितैषी है वह तीन दिन पश्चात् मृत्यु को प्राप्त हो जाएगा अत: उसकी मृत्यु के कारण दु:खी होकर मैं रो रही हूँ।

राजा आश्चर्य में पड़ गया उसने पूछा – यहाँ का राजा तो अभी जवान है, निरोग है फिर अचानक उसका मरण कैसे हो जाएगा। तब वह बोली–तीन दिन बाद सामने की लाल पहाड़ी से एक जहरीला काला सर्प निकलेगा और वह राजा को डस लेगा जिससे राजा के प्राण पखेरु उड़ जाएँगे। पुन: राजा ने प्रश्न किया क्या इसका कोई उपाय नहीं है ? तब वह बोली– यदि उस क्षण स्वेच्छा से कोई प्राण त्यागने को तैयार हो जाए तो राजा का जीवन बच सकता है। इतना कहकर वह परछाई लुप्त हो गई।

राजा वापस अपने महल पहुँचा तो सबसे पहले अपनी रानी के पास पहुँचकर उसने प्रात:काल की समस्त घटना उसे सुना दी तथा कहा–तुम विपत्ति के इन क्षणों में धीरजपूर्वक कार्य करना तथा अपनी इकलौती पुत्री के लिए जब तक कोई योग्य राजकुमार नहीं मिल जाता तब तक तुम राजकुमारी को ही पुरुष के वस्त्र पहनाकर राज सिंहासन पर बैठा देना। इतना कहकर राजा राजदरबार की ओर जाने लगा तभी रास्ते में उसे साधु की दूसरी बात याद आई कि शत्रु भी यदि अतिथि बनकर आए तो उसका सत्कार करना। उसने विचार किया कि पहाड़ी से आने वाला सर्प भी तो अतिथि है मुझे उसका सत्कार करना चाहिए। अत: सेवकों को आदेश देकर पहाड़ी से महल तक के रास्ते में सुगन्धित फूल बिछवा दिए तथा दूध से भरे हुए कटोरे रास्ते में दोनों ओर रखवा दिये।

दो दिन बाद नियत समय पर सर्प निकला और सीधे महल की ओर जाने लगा। रास्ते में उसने साफ–सुथरा फूलों से भरा मार्ग देखा तो विचार करने लगा काँटों और कंकड़ों पर चलने वाला मैं किसने मेरे मार्ग में फूल बिछा दिए। कुछ ही आगे बढ़ा कि रास्ते में दोनों ओर दूध से भरे कटोरे देखे तो वह दूध पीने लगा। फिर आगे बढ़ता हुआ राजमहल में पहुँचा।

ज्यों ही राजा ने सर्प को आते देखा तो दोनों हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और सर्प से निवेदन करता है। हे नागराज! तुम अपना कार्य करो मैं तुम्हारे समक्ष खड़ा हूँ। सर्प ने सोचा–यही वह महापुरुष है जिसने मेरे मार्ग में फूल बिछाए, मुझमें शत्रुता जानकर भी इतना सत्कार किया क्या मैं इसके प्राण ले लूँ? नहीं–नहीं मैं इतना कृतघ्न नहीं हूँ। वह फण उठाकर खड़ा हो गया और मनुष्य की आवाज में बोलता है कि हे राजन्! मेरा जीवन तो पापमय ही है जब तक धरती पर रहूँगा मेरे कारण दूसरों का अहित ही होगा और तुम

धरती पर रहोगे तो प्रजा सुख और शांति से जीवित रहेगी अत: मैं स्वेच्छा से प्राण त्यागता हूँ। ऐसा कहकर वह पलटी खा जाता है और मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

एक तरफ अपने प्राण बच गए इसकी खुशी किन्तु दूसरी तरफ सर्प के प्राण चले गये इसका दु:ख। फिर जो हुआ सो हुआ ऐसा विचारकर अपनी रानी के पास इस बात की सूचना देने के लिए अपने कदम रनवास की ओर बढ़ाता है और जैसे ही रानी के महल के निकट पहुँचकर खिड़की से अंदर की ओर देखता है तो उसकी आँखें लाल हो जाती हैं। तलवार म्यान से बाहर निकल आती है। इतना बड़ा विश्वासघात। जिसे मैं प्राणों से ज्यादा चाहता हूँ उस रानी के महल में अन्य पुरुष एक साथ एक आसन पर। मारे क्रोध के वह उस पर तलवार चलाने के लिए आगे बढ़ा उसको साधु महाराज की तीसरी बात याद आ गई कि विपरीत परिस्थितियों में भी उतावली नहीं करना। अत: वह तलवार वापस म्यान में रख लेता है और जैसे ही आगे बढ़ता है तो क्या देखता है कि वह पुरुष और कोई नहीं उसकी अपनी इकलौती पुत्री ही थी जिसे राजाज्ञा से रानी ने पुरुष के वस्त्र पहना दिये थे और पिता की मृत्यु के दु:ख से बेटी से गले लग कर रो रही थी। जैसे ही राजा ने देखा तो हक्का बक्का रह गया और सोचने लगा आज मैं बहुत बड़े अनर्थ से बच गया। वास्तव में साधु जी की बातें लाखों की नहीं अमूल्य थीं।

क्योंकि पहली बात मानने से राजा को अपनी मृत्यु का पता चल गया। दूसरी बात मानने से उसके प्राण बच गए और तीसरी बात मानने से वह अपनी पुत्री की हत्या के पाप से बच गया।

**सारांश :** हमें अपने जीवन में सदा गुरुओं का सत् उपदेश ग्रहण करना चाहिए तथा उसे जीवन में उतारकर अपना जन्म सफल बनाना चाहिए।

## अध्यात्म की अपेक्षा उपयोग

अध्यात्म की अपेक्षा उपयोग के तीन भेद हैं :-

**( १ ) अशुभोपयोग :** विषयानुराग रूप परिणाम अशुभोपयोग है। उपयोग का व्यापार जब अशुद्ध परिणामों के साथ, आर्त रौद्र परिणाम के साथ, कृष्ण आदि अशुभ लेश्या के साथ, आहारदि संज्ञा के साथ हो अथवा रात्रि भोजन, अभक्ष्य भक्षण आदि का परिणाम या तीव्र कषायरूप परिणाम हो तो अशुभोपयोग कहलाता है।

**( २ ) शुभोपयोग :** उपयोग का व्यापार शुभ परिणामों से होता है तो शुभोपयोग होता है। पंच परमेष्ठी की पूजा, दान, सेवा, वैयावृत्ति, व्रत उपवास, तीर्थ वंदना, परीषह जय आदि, पीत, पद्म,शुक्ल लेश्यादि रूप होता है तो शुभोपयोग है।

**( ३ ) शुद्धोपयोग:** कषाय के अभाव में, वीतरागता के साथ जो उपयोग का व्यापार होता है वह शुद्धोपयोग है।

आगम के परिप्रेक्ष्य में विचार करते हैं तो गुणस्थान की अपेक्षा से प्रथम गुणस्थान से तृतीय गुणस्थान तक क्रमश: घटता हुआ अशुभोपयोग। चतुर्थ गुणस्थान से षष्टम गुणस्थान तक क्रमश: बढ़ता हुआ शुद्धोपयोग। सप्तम से बारहवें गुणस्थान तक क्रमश: बढ़ता हुआ शुद्धोपयोग। तेरहवाँ व चौदहवाँ गुणस्थान शुद्धोपयोग का फल। अथवा इसे इस रूप में भी चिंतन कर सकते हैं।

**प्रथम गुणस्थान में :** उत्कृष्ट अशुभोपयोग
**द्वितीय गुणस्थान में :** मध्यम अशुभोपयोग
**तृतीय गुणस्थान में :** जघन्य अशुभोपयोग
**चतुर्थ गुणस्थान में :** जघन्य शुभोपयोग
**पंचम गुणस्थान में :** मध्यम शुभोपयोग
**षष्टम गुणस्थान में :** उत्कृष्ट शुभोपयोग
**सप्तम-अष्टम गुणस्थान में :** जघन्य शुद्धोपयोग
**नवमें-दसवें गुणस्थान में :** मध्यम शुद्धोपयोग
**ग्यारहवें-बारहवें गुणस्थान में :** उत्कृष्ट शुद्धोपयोग
**तेरहवें गुणस्थान में :** जघन्य शुद्धोपयोग का फल
**चौदहवें गुणस्थान में :** मध्यम शुद्धोपयोग का फल
**सिद्ध :** उत्कृष्ट शुद्धोपयोग का फल

**हे प्रभु ज्ञान का दान दो, हम सभी की यही वंदना।**
**दूर दुर्गुण सभी तुम करो, हम सभी की यही प्रार्थना॥**
**धर्म रक्षा में हम प्राण दें, न अधर्मी कभी हम बनें।**
**झूठे वैभव को हम त्याग कर, सर्वथा सत्य राही बनें॥**
**न कभी हमको अभिमान हो, बस यही एक आराधना।**
**हे प्रभु ज्ञान का दान दो, हम सभी की यही वंदना॥**
**सदाचारी रहें हम सदा, और सदाचार हो सम्पदा।**
**न रहे मन में ईर्ष्या कभी, प्रीत की ही बहे नर्मदा॥**
**छल-कपट से रहे दूर हम, मिलके करते यही कामना।**
**हे प्रभु ज्ञान का दान दो, हम सभी की यही वंदना॥**
**लाखों बाधाएँ आएँ तो क्या, लोभ भरमाए हमको तो क्या।**
**जिसे मिले जाए तेरी शरण, धैर्य छूटेगा उसका कहाँ॥**
**हम भक्तों को तुमसे प्रभो, यही वरदान तो मांगना।**
**हे प्रभु ज्ञान का दान दो, हम सभी की यही वंदना॥**

# अभ्यास

**अ. प्रश्नों के उत्तर लिखिए :-**

१. अविरत सम्यक्त्व गुणस्थान का क्या स्वरूप है?
२. चौदह गुणस्थान के नाम क्या हैं?
३. उपशामक और क्षपक का क्या अर्थ है?
४. श्री समयसार ग्रंथ के दश अधिकार कौन से हैं?
५. अशुभोपयोग एवं शुभोपयोग किसे कहते हैं?
६. द्रव्यार्थिक नय के नौ भेद कौनसे हैं?
७. सद्भूत एवं असद्भूत व्यवहार नय किसे कहते हैं?
८. स्याद्वाद के सातभंग और उसका उदाहरण बताएं?
९. बादरसूक्ष्म और सूक्ष्मबादर का क्या अर्थ हैं?
१०. श्री सम्मेद शिखर जी सिद्धक्षेत्र की क्या विशेषता है?
११. वे तीन बातें कौन सी थीं राजा ने उसका कैसे पालन किया?
१२. तम एवं छाया में क्या अंतर है?

**ब. छन्द एवं सूत्र को पूरा करें :-**

१. स्वयंप्रभा ..... दीनी।
२. सुपार्श्वनाथ ..... चूली।
३. परात्म ..... गोत्रस्य।
४. दिग्देशानर्थ ..... सम्पन्नश्च।
५. रेवानदी ..... भव पार।
६. किसको माने ..... लगाए रे।
७. समता बिना ..... सामायिक है।
८. कुपथ ..... बिना लिए।
९. सदाचारी ..... यही वंदना।

**स. परिभाषाएं लिखें :-**

१. सम्यक्त्व मिथ्यात्व गुणस्थान
२. अमूर्तिक
३. स्वदेह परिमाण
४. प्रत्यक्षप्रमाण
५. एवं भूत नय
६. स्याद् अस्ति एव
७. बादर
८. उपचरित असद्भूत व्यवहार नय

**द. एक शब्द में उत्तर लिखें :-**

१. प्रमाद सहित संयमी मुनिराज को कहते हैं ?
२. सूक्ष्म लोभ कषाय जहाँ पर रहती है ?
३. सिरिभूवलय ग्रन्थ कब रचा गया सन् ?
४. श्री जिनसेनाचार्य के अनुसार समयसार में गाथाएँ हैं ?
५. मतिज्ञान कौन सा प्रमाण है ?
६. संसार जीव सिद्ध के समान शुद्ध है कौन सा नय है ?
७. सूर्य-चन्द्र की पर्याय कौन सी है ?
८. दूध - पानी पुद्गल की अवस्था है ?
९. सूर्य का प्रकाश कहते हैं ?
१०. श्री धर केवली कहां से मोक्ष गये ?

**इ. अन्यत्र ग्रंथ से खोजें, ज्ञान बढ़ाएं, पढ़ें और पढ़ाएँ।**

१. चौदह मार्गणा स्थानों में कितने-कितने गुणस्थान होते हैं ?
२. श्री समयसार ग्रन्थ के प्रत्येक अधिकार में कितनी-कितनी गाथाएँ हैं ?
३. नयों के भेद-प्रभेद, उनकी परिभाषाएँ क्या हैं ?
४. आ. श्री ज्ञानसागर जी ने सप्तभंगी के लिए कौन-सा उदाहरण दिया है ?
५. अणुओं में बंध की क्या व्यवस्था है ?
६. सिद्ध क्षेत्र गिरनार जी का क्या इतिहास है ?
७. महावीर जी को अतिशय क्षेत्र क्यों कहते हैं ?

दुनिया में गुरु हजारों हैं,
विद्यासागर जी का क्या कहना,
इनकी शक्ति का क्या कहना,
इनकी भक्ति का क्या कहना ॥
दुनिया में गुरु हजारों है...
जब ज्ञानसागर गुरुवर से मिले,
दीक्षा की आशा लेके गए - २
माता को मनाना क्या कहना
परिवार भुलाना क्या कहना ॥
दुनिया में....
ये घर की देहरी लांघ गए,
और ज्ञान की गंगा में डूब गए,
कुछ मोह न करना क्या कहना
कर्मो को जलाना क्या कहना ॥
दुनिया में....
गुरुदेव के मन-मंदिर में सदा,
गुरुज्ञान सागर जी की ज्योति जले - २
ये गुरु अनोखे क्या कहना,
जग इनका दिवाना क्या कहना ॥
दुनिया में...